Dr. REETU RAJ

Assistant Professor

Department of HISTORY

RAJA SINGH COLLEGE SIWAN

(Jai Prakash University Chapra)

Lecture Notes on - **ऋग्वैदिक काल की सामाजिक जीवन। (Note-1)**

(for TDC Part 1 HISTORY HONOURS)

ऋग्वैदिक काल की सामाजिक जीवन।

ऋग्वैदिक समाज में आर्यों का जीवन बहुत व्यवस्थित था। सामाजिक जीवन की सबसे महत्वपूर्ण इकाई परिवार था। परिवार के लिए ऋग्वेद में 'गृह' शब्द प्रयुक्त हुआ है।

पितृसत्तात्मक समाज-:

ऋग्वैदिक समाज पितृसत्तात्मक समाज था। पिता ही परिवार का मुखिया होता था और पिता के पश्चात सबसे बड़ा पुत्र परिवार का प्रधान होता था ।ऋग्वेद के कुछ उल्लेखों से पिता के असीमित अधिकारों की पुष्टि होती है। परिवार में पिता के पश्चात माता का स्थान था जो पति के जीवित रहते परिवार में पूर्ण प्रभावशाली होती थी पुत्र का जन्म शुभ माना जाता था। गोद लेने की प्रथा थी, परंतु उसे बहुत अच्छा नहीं माना जाता था।

वर्ण-व्यवस्था-:

ऋग्वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था के चिह दिखाई पड़ते हैं। आर्यों को गौर वर्ण थे तथा दासों को कृष्ण वर्ण कहा जाता था। वर्णव्यवस्था का आधार कर्म हो गया था। ऋग्वेद के दसवें मण्डल पुरुष-सूक्त' में प्रथम बार यह उल्लेख किया गया कि ईश्वर ने आदि-पुरुष के मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से राजन्य (क्षत्री), जाँघों से विश् (वैश्य) और चरणों से शूद्र को जन्म दिया। इससे स्पष्ट है कि वर्ण अथवा जाति-व्यवस्था, का स्वरूप ऋग्वेद के निर्माण के अन्तिम समय में बनना आरम्भ हुआ था। आरम्भ में समाज के दो भाग थे-द्विज (आय) और अद्विज (अनार्य)। परन्तु धीरे-धीरे वर्ण-व्यवस्था आरम्भ हुई ।बाह्मणों और राजन्यों ने इसमें श्रेष्ठ स्थान प्राप्त कर लिया। जनसाधारण आर्य जो कृषि, पशुपालन अथवा अन्य व्यवसायों में लगे हुए थे, 'विश्' कहलाने लगे और अनार्यों को शूद्रों की श्रेणी में रखा गया। परन्तु इस काल में वर्ण-व्यवस्था कठोर न थी। व्यवसायों के आधार पर आर्यों में वर्ण-परिवर्तन सम्भव था। विवाह-सम्बन्धों और खान-पान में आर्यों में कोई बन्धन न था। केवल दस्यु, दास अथवा शूद्रों से, जो आर्य न थे, अन्तर किया जाता था।

दास व्यवस्था-:

ऋग्वैदिक काल में दास व्यवस्था अस्तित्व में थी। प्राय: युद्धबंदियों का दास बना लिया जाता था किन्तु इन दासों का प्रयोग घरेलू कार्यों में ही किया जाता था।ऋग्वेद में दान के लिए पुरुष-दान का उल्लेख बहुत कम मिलता है जबकि नारी दास-दान में स्वीकार की जाती थी, इसके विवरण बहुत हैं। इससे यह अनुमान होता है कि धनी वर्ग में घरेलू दास-प्रथा ऐश्वर्य के प्रतीक के रूप में विद्यमान थीं। परन्तु आर्थिक उत्पादन में दास-प्रथा उस समय प्रचलित न थी अर्थात् कृषि उत्पादन या किसी भी अन्य वस्तु के उत्पादन के लिए मनुष्यों को दासों के रूप में नहीं रखा जाता था।

विवाह -:

विवाह का मुख्य उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति माना जाता था।साधारणतया एकपली-प्रथा प्रचलित थी, परन्तु बहुपत्नी-प्रथा पर कोई रोक न थी। राजवंश के व्यक्ति एक से अधिक विवाह कर लेते थे। परिवार में पत्नी का सम्मान

था। सभी सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों में हिस्सा लेती थी। सामान्यतया बाल-विवाह का प्रचलन नहीं था और स्त्रियाँ स्वेच्छा से विवाह करती थीं। स्त्री अथवा पुरुष में शारीरिक दृष्टि से कोई दोष होने पर ही दहेज दिया जाता था अन्यथा यह प्रथा प्रचलित न थी। कन्या की विदाई के समय उपहार एवं द्रव्य दिये जाते थे, जिसे वस्तु कहते थे। सम्भवतया दस्यु अथवा अनार्यों से विवाह वर्जित था। उसी प्रकार, भाई-बहन और पिता-पुत्री का विवाह निषिद्ध था। इसके अतिरिक्त विवाह-सम्बन्धों पर कोई अन्य रुकावट न थी। विधवा-विवाह हो सकता था या नहीं, इस विषय में स्पष्ट नहीं कहा गया है परन्तु पुत्रहीन को अपने पति के भाई से पुत्र उत्पन्न करने अथवा नियोग (अस्थायी विवाह) के द्वारा पुत्र उत्पन्न करने का अधिकार था। सती-प्रथा के उदाहरण बहुत कम और केवल राजवंशों में प्राप्त होते हैं। यह प्रथा सार्वजनिक रूप से मान्य न थी। जीवनभर अविवाहित रहने वाली लड़कियों को 'अमाजू' कहा जाता था।

References: Internet & Competitive books.